**ओ३म्**

**‘ईश्वर के निराकार स्वरूप की उपासना ही सरल एवं लक्ष्य प्रदायक’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

क्या ईश्वर की उपासना की जानी साहिये? ईश्वर है या नहीं, यदि है तो कैसा है, उसका स्वरुप कैसा है, उपासना क्या है, उपासना क्यों करें, उपासना से यदि लाभ होता है तो किस प्रकार आदि अनेक प्रश्न हैं जिन्हें उपासक को जानना चाहिये और उसके बाद उपासना में प्रवृत्त होना चाहिये। हम अनुभव करते हैं कि आज देश की 80-90 प्रतिशत जनता ईश्वर को मानती है व किसी न किसी रूप में उसकी पूजा वा उपासना करती है परन्तु वह ईश्वर व उसकी उपासना से जुडे प्रश्नों, उनके उत्तर व सही उपासना विधि से अनभिज्ञ रहते हैं। उनकी तो बात ही क्या है, हमारे बड़े-बड़े पुरोहित व पुजारी भी पूजा व उपासना वस्तुतः क्या है, कैसे की जानी चाहिये, कैसे की जाती है, इनके उत्तरों पर कभी विचार नहीं करते और न ही इस विषय को गहराई से जानते हैं। यदि वह सदच्छिा विचार करें और इसके उत्तर खोजें तो वह इन सब प्रश्नों के यथार्थ उत्तर आसानी से ढूंढ सकते हैं। महर्षि दयानन्द ने इन सभी प्रश्नों पर विचार किया और शास्त्र प्रमाणों सहित अनेक युक्तियों व तर्क संगत उत्तर अपने ग्रन्थों में दिये हैं। इन्हें जानकर उपासक व जिज्ञासु ईश्वर का स्वरूप व उसका महत्व जान जाता है और फिर उपासना करने में उसकी प्रवृत्ति होकर उसे उसमें रस वा आनन्द आता है। दैनिक अभ्यास से उसका सन्ध्या-उपासना में संस्कार दृण हो जाता है और वह इसे करे बिना रह नहीं पाता। हमने भी आज इन्हीं प्रश्नों पर विचार किया है। हमें ईश्वर के निराकार स्वरूप, जो ईश्वर का यथार्थ स्वरूप है, की ही उपासना सरल व सर्वाधिक लाभकारी और जीवन की सभी समस्याओं के समाधान करने वाली अनुभव हुई। इन्हीं सब प्रश्नों पर विचार कर उनके उत्तर हम इस लेख में देने का प्रयास कर रहे हैं।

उपासना करने से पूर्व उपास्य के स्वरूप का ज्ञान आवश्यक है अन्यथा उपासना से इच्छित लाभ प्राप्त नहीं होंगे। हम इस संसार को बनाने, चलाने वाले, प्रलय करने वाले, जीवात्मा को मनुष्य जन्म देने वाले, उनके पूर्वजन्मों में किये गये कर्म जिनका सुख-दुःख रूपी फल मिलना शेष है, वृद्धावस्था व अन्य आपातकालीन अवस्थाओं में जीवात्मा को शरीर से वियुक्त कर उसे कर्मानुसार नया जीवन देने, जीवन में सुख-शान्ति-ऐश्वर्य-योग्यसन्ताने आदि देने के कारण हम ईश्वर की उपासना जिसके अन्तर्गत उसकी स्तुति व प्रार्थना की जाती है, करते हैं। इन बातों का ज्ञान भी सभी ईश्वर उपासकों को होना चाहिये। इसके बाद ईश्वर व आत्मा का स्वरुप जानना उचित है। इसके लिए हमारे वेद, उपनिषद व दर्शन ग्रन्थों सहित अन्य कुछ ग्रन्थों में यथार्थ ज्ञान उपलब्ध है। इस समस्त ज्ञान का संग्रह व संकलन कर ऋषि दयानन्द ने हमें उपलब्ध कराया है। **ईश्वरीय ज्ञान वेद व वैदिक साहित्य के अनुसार ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप (सत्य$चित्त$आनन्द स्वरूप) है। वह निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वाव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव सभी पवित्र व धार्मिक हैं। वह सर्वज्ञ, सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता, सब जीवात्माओं को कर्मानुसार सत्य न्याय से फल दाता आदि लक्षणों से युक्त है।** इन गुणों व स्वरूप वाली सत्ता ही ईश्वर है। इस ईश्वर के स्वरूप को उपासक को उपासना से पूर्व जान लेना चाहिये और उपासना के लिए सुखासन व पद्मासन आदि किसी एक आसन में बैठकर ईश्वर के इस स्वरूप का ही ध्यान व उसी की व उससे स्तुति-प्रार्थना करनी चाहिये। **इस स्वरूप पर विचार करने से यह भी ज्ञात होता है कि ईश्वर अजन्मा है। अजन्मा कभी जन्म नहीं लेता और न उसका अवतार होता है। ईश्वरीय ज्ञान चार वेद और वेदानुकूल उपनिषदों व दर्शनों में कही ईश्वर के जन्म व अवतार लेने की चर्चा नहीं है। अतः ईश्वर की उपासना का लाभ प्राप्त करने के लिए उपासक को ईश्वर के अवतार की मिथ्या मान्यता से अपने आप को दूर रखना होगा।** इसका अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए वह 17 मन्त्रों वाली ईशोपनिषद वा यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का ऋषि दयानन्द कृत हिन्दी अर्थों की सहायता से अध्ययन कर सकते हैं जिससे ईश्वर के जन्म वा मनुष्य जन्म के रूप में अवतार का समाधान व खण्डन होता है।

ईश्वर के इस स्वरूप को जानने के बाद जीवात्मा के स्वरूप को जानना भी आवश्यक है। **हम अर्थात् मैं कौन हूं, इस प्रश्न का उत्तर ही जीवात्मा का स्वरूप है।** वेद और वेदिक साहित्य से इसका यथार्थ उत्तर मिलता है जिसके अनुसार जीवात्मा एक चेतन तत्व, शरीर प्राप्त होने पर ज्ञान व कर्म करने की सामर्थ्य वाला, सूक्ष्म, एकदेशी, अल्पज्ञ, सृष्टि में ईश्वर के पुत्र-पुत्री के समान, अनादि, अविनाशी, अजर, अमर, किशोर-युवा-प्रौढ़-वृद्ध अवस्थाओं से रहित, ईश्वर की व्यवस्था से पूर्व कर्मानुसार नाना प्रकार के शरीर प्राप्त कर उनके सुख-दुख रूपी फल भोगने वाला जैसे गुणों व लक्षण आदि से युक्त जीवात्मा है। यह स्वरूप हमारा, हम सब मनुष्यों व अन्य सभी प्राणियों का है। जीवात्मा आसक्ति से युक्त कर्मों को करके उनमें फंसता है जो जन्म व मृत्यु के आधार होते हैं। ईश्वर की उपासना से इसके दुष्ट गुण-कर्म-स्वभाव छूट कर ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के अनुरूप पवित्र व धार्मिक बनते हैं जिसकी परिणति ईश्वर साक्षात्कार के रूप में होती है जो जन्म-मरण से छूट कर मोक्ष वा मुक्ति का आधार है। मोक्ष प्राप्त कर जीवात्मा 1 परान्त काल की अवधि जो 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों की होती है, उस अवधि तक के लिए जन्म-मरण से छूट कर ईश्वर के सान्निध्य में रहता है और इसके आनन्द से युक्त रहता है। जिस प्रकार मनुष्य जल से शीतलता और अग्नि की संगति व संग से उष्णता को प्राप्त करता है, इसी प्रकार ईश्वर के सान्निध्य, संगति व उपासना से ईश्वर के आनन्द गुण का अनुभव करता है। **यही मनुष्य जीवन की उन्नति की चरम अवस्था होती है। इस अवस्था की प्राप्ति के लिए ही ईश्वर ने वेदों में वा हमारे अनेक ऋषियों जिनमें ऋषि दयानन्द प्रमुख हैं, ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना व उपासना सहित ध्यान का विधान किया है।** इसको विस्तार से जानने के लिए योग एवं सांख्य दर्शनों का अध्ययन किया जा सकता है। इसके साथ ही ऋषि दयानन्द ने भी उपासना के लिए पंचमहायज्ञ विधि के अन्तर्गत सन्ध्योपासना की विधि लिखी है। इस विधि को आधार बना कर उपासना व ध्यान करने से मनुष्य को जीवन के लक्ष्य मोक्ष तक पहुंचने का मार्ग मिलता है। अतः ईश्वरोपासक को ईश्वर व जीवात्मा के स्वरूप सहित ईश्वर की उपासना की विधि का ज्ञान आवश्यक है।

हम ईश्वर व जीवात्मा के यथार्थ स्वरूप को कुछ-कुछ जान चुके हैं। हमें वैदिक साहित्य जिसमें सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित आर्याभिविनय एवं संस्कारविधि आदि ग्रन्थ भी हैं, का नियमित अध्ययन करना चाहिये। इससे हमारे ईश्वर के यथार्थ गुण-कर्म-स्वभाव के ज्ञान में वृद्धि होने के साथ उसमें स्थिरता आयेगी। जीवात्मा इससे ज्ञान वृद्धि को प्राप्त होगा और इससे उपासना में लाभ होगा। उपासना का शाब्दिक अर्थ समीप बैठना होता है। जीवात्मा के लिए उपासना योग्य या तो ईश्वर है या संसार। संसार की उपासना से इसका गुण जड़ता शरीर में प्रवेश करेगा जिससे आत्मा को अधिक लाभ नहीं होता, अपितु सांसारिक सुख की अस्थाई प्राप्ति व आध्यात्मिक आनन्द की हानि होती है। इससे हमारी आत्मा को तात्कालिक कुछ भौतिक सुख तो मिल सकता है किन्तु अजस्र आनन्द के स्रोत ईश्वर के पास बैठ कर उपासना करने से हमारे चित्त की वृत्तियां ईश्वर के गुणों का ध्यान करने से सांसारिक पदार्थों से हट कर ईश्वर में लगेंगी जिससे ईश्वर के ज्ञान, गुण आदि व शक्तियों का आत्मा में पात्रता के अनुरुप संचार हो सकता है। इससे आत्मा की निरन्तर उन्नति होना निश्चित होता है। यही निराकार स्तुति-प्रार्थना-उपासना, ध्यान व पूजा है। यह सारा संसार ईश्वर का है और इसकी प्रत्येक वस्तु ईश्वर की है। उसे भौतिक पदार्थों की यत्किंचित आवश्यकता नहीं है। अतः हमारा ईश्वर की काल्पनिक मूर्ति को जल, दूध, पत्र-पुष्प देना व इन पदार्थों को मूर्ति पर चढ़ाना हमारी दृष्टि व ज्ञान में व्यर्थ की क्रियायें हैं। किसने व क्यों इसका प्रचलन किया, इसका उत्तर इतिहास में नहीं मिलता किन्तु यह सत्य है कि मध्यकाल में अज्ञान व किन्हीं स्वार्थों के कारण निराकार ईश्वर की उपासना से ध्यान हटाकर इसे अशिक्षित व मन्द बुद्धि लोगों में प्रवृत्त किया होगा और समय के साथ यह वृद्धि को प्राप्त होकर सर्वत्र फैल गई। इसे देखकर तो यही लगता है कि जड़ पूजा के उपासकों ने ऋषि प्रणीत योगदर्शन आदि की जाने व अनजाने उपेक्षा की। आज धर्म व यथार्थ ईश्वर-उपासना का कोई निश्चित स्वरूप ही नहीं रह गया है। नित्यप्रति नये-नये भगवान कहलाने व अपने शिष्यों द्वारा माने जाने वाले भगवान वा गुरु उत्पन्न हो रहे हैं जो सामूहिक कथा करते हैं, भजन गाते हैं और शिष्य तालियां बजाकर व नृत्य कर धर्म की सेवा करते हैं। यह मार्ग अविद्या का मार्ग है जिसका वैदिक शास्त्रों में वर्णन नहीं है। वेद और वैदिक साहित्य तथा ऋषि परम्पराओं की लगभग 2 अरब वर्षों की परम्परा में इन मिथ्याचारों का पोषण नहीं होता। अतः विचार कर जीवन को नष्ट करने वाले कार्यों से सुधी मनुष्यों को दूर ही रहना चाहिये।

**ईश्वर निराकार है व निराकार ही रहेगा। वह कभी साकार न था और न हो सकता है। किसी के कहने व मानने से उसका स्वरूप बदलने वाला नहीं है।** किसी व्यक्ति को यदि रेलगाड़ी से बाहर जाना है और वह अपनी घड़ी पीछे कर उसके अनुसार रेलवे स्टेशन पर पहुंचेगा तो रेल जा चुकी होगी और वह गन्तव्य पर नहीं पहुंचेगा। इसी प्रकार से ईश्वर की मिथ्या जड़ पूजा व इस प्रकार के अन्य कृत्य करने से वह उपासना के लक्ष्य वा गन्तव्य मोक्ष प्राप्ति के लक्ष्य तक हजार जन्मों में भी नहीं पहुंच सकेगा। **सच्चे गुरुओं को सम्मान व मिथ्या गुरुओं का त्याग करना मनुष्य का कर्तव्य है। मनुष्यों की इनकी पहचान करनी आनी चाहिये। अतः आवश्यकता गुरुओं की परीक्षा लेने की है जिससे उचित व अनुचित का निर्णय किया जा सके।** जो गुरु सम्पत्तियों अपने चेलों से सम्पत्तियां लेकर अथाह सम्पत्तियों के स्वामी बनें हों, भव्य भवनों में निवास करत हों, जिनके पास सुख की प्रचुर सामग्री हो व जो उनका उपभोग करता हो, बड़ा बैंक बैलेन्स व धन-सम्पत्ति वाला हो, वह यथार्थ गुरु नहीं हो सकता। ईश्वर के उपासक सच्चे गुरु को इनसे कोई प्रयोजन नहीं होता। सम्पत्ति तथाकथित गुरू तो धन की एषणा वाले मनुष्य होते जिन्हें मनुस्मृति के अनुसार वित्तैषणा में फंसे होने के कारण धर्म का ज्ञान भी नहीं हो सकता। ऐसे गुरूओं से सच्चे ईश्वर उपासक को बचना चाहिये।

निराकार ईश्वर की सच्ची उपासना के लिए वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय से ईश्वर के अधिकाधिक गुण-कर्म-स्वभाव को जानकर उनका चिन्तन करना चाहिये। ईश्वर के स्वरूप विषयक वैदिक ग्रन्थों का स्वाध्याय भी एक प्रकार की स्तुति उपासना ही है। इससे सच्ची ध्यान व उपासना का मार्ग प्रशस्त होता है। गायत्री मन्त्र व प्रणव **‘ओ३म्’** नाम का इसके अर्थ सहित जप करना चाहिये। यह ओ३म् नाम ईश्वर का निज व मुख्य नाम है। इसमें ईश्वर के सब नाम आ जाते हैं। इसके अर्थपूर्वक ध्यान, जप व चिन्तन से आत्मा पवित्र होगी, आत्मा का बल बढ़ेगा, सद्ज्ञान की प्राप्ति होगी, शरीर स्वस्थ रहेगा, आवश्यकतायें कम होंगी, जीवन सुखी व खुशहाल होगा और ऐसे अनेकानेक लाभ होंगे। अतः जड़ व साकार मिथ्या पूजा त्यागकर सच्चे ईश्वर के गुणों का ध्यान कर उसके निराकार स्वरूप को अपने ज्ञान में स्थिर कर उसकी उपासना करने से उपासना के लाभों से सम्पन्न व समृद्ध हुआ जा सकता है। इति।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**